सूर्य-मूर्तियों का स्वरूप

(मिथिला के सन्दर्भ में विशेष)

डॉ. सुशान्त कुमार

"साम्ब-पुराण" के अनुसार जम्बूद्वीप में प्रारम्भ में सूर्य के बिम्ब की पूजा होती थी, किन्तु श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब के द्वारा लाये गये 18 शाकद्वीपी ब्राह्मणों ने इसकी मूर्ति विश्वकर्मा से बनवायी तथा सूर्य की मूर्ति-पूजा का प्रचलन आरम्भ किया। ये शाकद्वीपी ब्राह्मण बाद में मगध क्षेत्र में बस गये। इस प्रकार, सूर्य की मूर्ति-पूजा में मगध का महत्त्वपूर्ण योगदान है। लेकिन पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आधार पर न केवल मगध में, बल्कि सम्पूर्ण बिहार में सूर्य की मूर्ति-पूजा का प्रचुर प्रचलन सिद्ध होता है। मिथिला क्षेत्र में भी हाल के वर्षों में अनेक सूर्य-मूर्तियाँ मिट्टी काटने के क्रम में मिली हैं। इन मूर्तियों के आधार पर सम्पूर्ण बिहार प्रान्त में सूर्य-मूर्ति के निर्माण का इतिहास प्रस्तुत करता हुआ यह आलेख है।

सूर्योपासना भारत में ही नहीं, बल्कि विश्व की सभी प्राचीन सभ्यताओं में प्रमुखता के साथ रही है। सूर्य प्रकृति की आदि शक्तियों में से एक हैं। आदि शक्ति के कारण प्राचीन भारत ही नहीं, बल्कि संसार के प्राचीन सभ्यताओं में सूर्य उपासना की परम्परा के अनेक तत्त्व दिखाई देते हैं। प्राचीन भारत में सूर्योपासना का आरम्भ कब हुई, यह स्पष्ट रूप से कहना कठिन है। भारत की सैन्धव सभ्यता में भी सूर्योपासना का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं प्राप्त होता, परन्तु कुछ पुरातात्त्विक साक्ष्य के रूप में ऐसे चिह्न मिलते हैं, जो परवर्ती युग में सूर्य एवं सूर्योपासना के प्रतीक समझे गये।

वैदिककालीन भारत में सूर्योपासना का अत्यधिक महत्त्व था। वैदिक लोगों ने सूर्योपासना से सम्बन्धित अनेक देवी देवताओं की कल्पना कर ली थी। इनमें सविता, पूषन्, मित्र आदि प्रमुख हैं। सूर्योपासना के क्रम में सूर्य के अधिकांश रूपों और कुछ नये रूपों को जोड़कर 'द्वादशादित्य' की कल्पना की गई।

प्राचीन ग्रन्थों में सूर्य की अनेक ऐसी विशेषताओं का वर्णन मिलता है, जिन्होंने आगे चलकर सूर्य प्रतिमा एवं सूर्योपासना को प्रभावित किया। वैदिक काल में सूर्य आकाश में दिखाई पड़नेवाले ज्योतिःपिण्ड के रूप में पूज्य थे। वेदों में सूर्य तथा उनके विविध रूपों का विस्तृत वर्णन है। ऋग्वेद में एक बार छः आदित्यों का

*प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्त्व के शोधार्थी, मूर्तिविज्ञान विषय पर विशेष अध्ययन एवं शोधकार्य,सम्प्रति- उत्तरी बिहार के पुरातत्त्व एवं इतिहास पर स्वतन्त्र रूप से अध्ययन करते हुए शैक्षणिक एवं सह-शैक्षणिक क्रियाकलाप।

"'अपराजितपृच्छा' के अनुसार सूर्य की प्रतिमा द्विभुजी, एकमुखी तथा हाथों में श्वेत पद्म धारण किए हुए हों। वह नवग्रहों से घिरी हों। अत्यन्त तेजस्वी और शतपद्मों पर स्थित हो। तेजयुक्त वर्तुल बिम्ब के मध्य प्रदर्शित हो। समस्त लक्षणों से युक्त एवं समस्त आभूषणों से विभूषित हो।"

नामोल्लेख भी हुआ है। सूर्य तथा उनके विविध रूपों की पूजा उत्तर वैदिक काल में भी प्रचलित थी। इस युग के साहित्य में द्वादशादित्यों के निश्चित सन्दर्भ उपलब्ध हैं और इन्हें वर्ष के बारह महीनों के तद्रूप माना गया है। यद्यपि भारत में सूर्योपासना और सूर्यपूजा की परम्परा अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित रही, कुछ साक्ष्यों से भी ऐसा स्पष्ट है तथापि कुछ साहित्यिक और पुरातात्त्विक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि सौर सम्प्रदाय के विकास में ईरान के सूर्य उपासक मगों का विशेष योगदान था। इन मग लोगों के द्वारा ईरानी सूर्योपासना अथवा मिहिर की पूजा भारत आई थी।

सूर्य से सम्बन्धित लक्षण मध्यकाल तक आते-आते पूर्णतया निर्धारित हो चुके थे। इस काल में सूर्य की प्रतिमा स्वतन्त्र रूप में, द्वादशादित्यों के रूप में एवं नवग्रह पैनलों के साथ दिखाई देता है। सूर्य के प्रतिमा-लक्षण में, द्वादशादित्यों का वर्णन 'अपराजित-पृच्छा' और 'देवतामूर्ति-प्रकरण' में तथा नवग्रहों के प्रतिमा-लक्षण तीनों विवेच्य शास्त्रों में मिलते हैं। इन शास्त्रों में सूर्य के अष्ट-प्रतिहारों का सुनियोजित विवरण भी उपलब्ध होते हैं। एक प्रधान देवता की भाँति सूर्य का वर्णन केवल अपराजितपृच्छा और रूपमण्डन में है, देवता मूर्तिप्रकरण में नहीं। देवता-मूर्तिप्रकरण में सूर्य द्वादशादित्यों में एक है। 'अपराजितपृच्छा' और 'रूपमण्डन' में उपलब्ध सूर्य प्रतिमा-लक्षण लगभग एक समान है। अपराजितपृच्छा के अनुसार सूर्य की प्रतिमा द्विभुजी, एकमुखी तथा हाथों में श्वेत पद्म धारण किए हुए हों। वह नवग्रहों से घिरी हों। अत्यन्त तेजस्वी और शतपद्मों पर स्थित हो। तेजयुक्त वर्तुल बिम्ब के मध्य प्रदर्शित हो। समस्त लक्षणों से युक्त एवं समस्त आभूषणों से विभूषित हो, अपराजितपृच्छा में सभी ग्रहों को समान रूप से किरीटमाला व समस्त आभूषणों से विभूषित कहा गया है, उसका वर्ण लाल हो तथा वह लाल वस्त्र धारण किए हो। यहाँ सूर्य का वाहन सप्ताश्व रथ बताया गया है। रूपमण्डन में भी सूर्य को द्विभुज एकमुख हाथों में श्वेत पद्म धारण किए हुए तेजयुक्त वर्तुल विम्ब के मध्य स्थित समस्त लक्षणों से युक्त एवं समस्त आभूषणों से विभूषित, रूपमण्डन में भी समस्त ग्रह समान रूप से किरीटमुकुट और रत्नकुण्डलों से अलंकृत बताए गए हैं तथा रक्तवस्त्र-धारी कहा गया है और उनका वाहन सप्ताश्व रथ बताया गया है। यहाँ सूर्य के रक्त वर्ण का तथा उनके नवग्रहों से घिरे शत पद्मों पर स्थित होने का उल्लेख नहीं है।

इस प्रकार इन विवेच्य शास्त्रों में वर्णित सूर्य की इन सामान्य विशेषताओं का उल्लेख अन्य अनेक प्राचीन ग्रन्थों- मत्स्यपुराण, अग्निपुराण, गरुडपुराण,

पद्मपुराण, स्कन्दपुराण, मानसोल्लास, शिल्परत्न आदि विभिन्न ग्रन्थों में भी है। सूर्य और इसकी उपासना की चर्चा रामायण, महाभारत, विष्णु-पुराण, भागवत पुराण, ब्रह्मवैवर्त-पुराण आदि में विस्तार से की गयी है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सूर्य प्रतिमा निर्माण सम्बन्धी उत्तर भारतीय परम्परा में सूर्य के उदीच्य वेश शरीर के भली भाँति ढके होने के रूप में बनाया जाता है। मूर्तिकला में सूर्य का प्रदर्शन दो प्रकार से मिलता है-

1. औदीच्य वेशभूषा में
2. दक्षिणी वेशभूषा में

प्रतिमाशास्त्र सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों में सूर्य प्रतिमा निर्माण विधान का उल्लेख किया गया है। सूर्य प्रतिमा के निर्माण विधान का प्राचीनतम उल्लेख वराहमिहिर ने 'बृहत्संहिता' में किया है। इस ग्रन्थ में सूर्य को उत्तरी वेशभूषा अर्थात् औदीच्य वेशभूषा में दिखाने का विधान किया गया है। सूर्य के अष्ट प्रतिहारों का वर्णन विवेच्य शास्त्रों में है। ये प्रतिहार हैं- दण्डी, पिंगल, आनन्द, अन्तक चित्र, विचित्र किरणाक्ष और सुलोचन। अपराजितपृच्छा और देवतामूर्तिप्रकरण में इन प्रतिहारों को पुरूषाकार निर्मित करने का निर्देश है। विवेच्य शास्त्रों में वर्णित ये प्रतिहार मूर्तियाँ चतुर्भुजी हैं।

प्राचीन काल से ही उपासना और पूजन के भाव से आराध्य देवी-देवताओं की मूर्ति बनती चली आ रही है। इसलिए किसी भी देवता के उपासना में प्रतिमा लक्षण की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है। मूर्ति को गढ़ने का कार्य शिल्पकार करता है। शिल्पकार को प्रतिमाशास्त्रीय लक्षणों के मुताबिक निर्धारित मानदण्डों का पालन करना होता है; लेकिन शिल्पी को उसके अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता भाव-भंगिमा में सीमित हो जाती है। शिल्पगत विशेषता प्राचीन एवं मध्यकालीन भारतीय साहित्य में सूर्य प्रतिमा लक्षण से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त होती है। शिल्पशास्त्रीय ग्रन्थ भारत के उत्तर एवं दक्षिण दोनों हिस्से में लिखे गये।

उत्तर भारतीय प्रतिमालक्षण सम्बन्धी ग्रन्थों में वराहमिहिरकृत बृहत्संहिता, विष्णुधर्मोत्तरपुराण, मत्स्यपुराण, अग्निपुराण, भविष्यपुराण, साम्बपुराण, अपराजितपृच्छा, रूपमण्डन, विश्वकर्मशास्त्र आदि महत्वपूर्ण हैं, तो दक्षिण भारतीय प्रतिमा-लक्षण-ग्रन्थों में मयमत, पूर्वकारणागम, अंशुमद्भेदागम, सुप्रभेदागम, मानसोल्लास, शिल्परत्न-जैसे महत्त्वपूर्ण हैं। उत्तर और दक्षिण भारत के शिल्पशास्त्रों में कुछ समानताएँ भी हैं तो कुछ अन्तर भी।

सूर्य के प्रतिमा पर मुख्य देवता के अलावा कई अन्य आकृतियाँ बनी हुई मिलती हैं। शिल्पकार द्वारा शास्त्रसम्मत शास्त्रीय परिधि के अन्तर्गत मुख्य देवता के लक्षण, आयुध, उपदेवता और पार्श्व-देवताओं का निरूपण किया गया। इन आकृति को देखने पर यह कह सकते हैं कि सूर्य की प्रतिमा में मुख्य देवता के अतिरिक्त उपदेवता की संख्या अन्य देवताओं की प्रतिमा से कुछ अधिक रहता है। सूर्य एकमात्र ऐसे देवता हैं, जिनकी मूर्तियों में परिवार-देवों का पार्श्वों में सर्वाधिक संख्या में उत्कीर्णन हुआ है जो विष्णुधर्मोत्तरपुराण एवं अन्य शिल्पशास्त्रीय ग्रन्थों से निर्दिष्ट है। इन आकृतियों में गुप्त-काल में दण्ड-पिंगल, उषा-प्रत्युषा, अरुण सारथी; गुप्तोत्तर काल में दो अश्वनीकुमार, दो मनु एवं मध्यकाल में परिकर में नवग्रहों, द्वादशआदित्यों, राज्ञी-निक्षुभा का भी अंकन किया गया है। सूर्य प्रतिमा लक्षण की जानकारी वराहमिहिर कृत बृहत्संहिता में द्विभुज,

सूर्य प्रतिमाओं की सामान्य विशेषताएँ

1. सूर्य की प्रतिमा दो प्रकार की स्थानक (खड़े हुए) और आसन (भद्रासन बैठे हुए) मुद्राओं की प्रतिमाएँ प्राप्त होती हैं।
2. सूर्य प्रतिमाएँ किरीट मुकुट, एकावली कुण्डल, लम्बा कोट, कन्धे पर उत्तरीय, कमर में अलंकृत पट्टी, जिसके दोनों छोर सामने लटकते हों और पावों में धोती और उपानह (बूट) धारण किये हुए प्रदर्शित की गई हैं।
3. अधिकांश सूर्य प्रतिमाओं के दोनों हाथों में सनाल कमल हैं । किसी किसी प्रतिमा के एक हाथ में सनाल कमल और एक हाथ में कटार है। स्थानक मुद्रा की प्रतिमाओं के कमलनाल युक्त हाथ कंधे तक उठे हुए हैं।
4. दो तीन अपवादों को छोड़कर अधिकांश प्रतिमाओं को सात अश्वों से जुते रथ पर सारथी अरुण के साथ प्रदर्शित किया गया है। अपवाद बंगाल के नियामतपुर और कुमारपुर से प्राप्त सूर्य प्रतिमाएँ हैं।
5. सूर्य प्रतिमा के दाहिनी ओर मसिपात्र और लेखनी लिये हुए पिङ्गल तथा बायीं तरफ दण्ड लिये दण्डी को दर्शाया गया है।
6. इस प्रकार उषा प्रत्यूषा को दायें एवं बायें प्रदर्शित गया है। कई प्रतिमाओं में वे बाण चलाती दिखाई गई हैं।

उदीच्य वेशधारी, कंचुक एवं अव्यंग से युक्त; दोनों करों में सनाल पद्म रथ का अनुल्लेख है। दोनों पार्श्व में द्वारपाल की चर्चा पार्श्व देवता के रूप में की गयी है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण में सूर्य के दो विवरण मिलते हैं। पहले विवरण में सूर्य को द्विभुज पद्मासन में तथा एक चक्र सप्ताश्वरथ पर, दोनों करों में सनाल पद्म बताया गया है। इसके अलावा दूसरे विवरण में सूर्य को चतुर्भुज, उदीच्यवेश, श्मश्रु, छः अरों और एक चक्र वाला सप्ताश्वरथ; ऊपर के दो करों में पद्म-पुष्पमाला के रूप में रश्मियाँ, अन्य दो हाथ दण्ड-पिंगल के सिरों पर अवस्थित बताया गया है। पार्श्व देवता के रूप में दण्ड, पिंगल, यम, मनुद्वय, रेवन्त, राज्ञी-निक्षुभा, छाया, सुर्वचसा, अरुण सारथी की चर्चा की गई है। मत्स्य-पुराण में सूर्य को चतुर्भुज, उदीच्यवेश, एक चक्र सप्ताश्वरथ, दो हाथों में सूर्य रश्मियों के समान पद्म पुष्प, दो हाथ दण्ड-पिंगल पर अवस्थित है। पार्श्व देवता के रूप दण्ड एवं पिंगल की चर्चा है। अग्नि पुराण में सूर्य को द्विभुज, उदीच्यवेश एक चक्र सप्ताश्वरथ, करों में सनाल पद्म एवं पार्श्व देवता में दण्ड, पिंगल एवं राज्ञी-निक्षुभा की चर्चा है।

भविष्यपुराण में सूर्य के लिए द्विभुज, सप्ताश्वरथ पर आरूढ़, दोनों करों में पद्म के साथ उदीच्यवेश का

अनुल्लेख मिलता है। पार्श्व देवता में स्कन्द (दण्ड रूप में), अग्नि (पिंगल रूप में), अश्विनी कुमार द्वय, राज्ञी-निक्षुभा, महाश्वेता की चर्चा की गई है। साम्बपुराण में सूर्य के लिये द्विभुज उदीच्यवेशधारी, करों में पद्म की चर्चा है जबकि पार्श्व देवता में दण्ड-पिंगल, राज्ञी-निक्षुभा की चर्चा है। भुवनदेव कृत अपराजितपृच्छा में सूर्य के लिये द्विभुज उदीच्यवेश एवं लाल वस्त्रधारी, सप्ताश्वरथ, करों में श्वेत पद्म का उल्लेख मिलता है, जबकि पार्श्व देवता में पिंगल, राज्ञी-निक्षुभा, उषा-प्रत्युषा सहित सारथी का अनुल्लेख मिलता है। सूत्रधारमण्डन कृत रूपमण्डन में अपराजितपृच्छा के प्रतिमालक्षणिक विवरणों के अनुरूप ही सूर्य का विवरण मिलता है। पार्श्व देवता में भी अपराजितपृच्छा के प्रतिमालक्षणिक विवरणों के अनुरूप ही विवरण दिया गया है। विश्वकर्मशास्त्र में द्विभुज, उदीच्यवेश, एक चक्र सप्ताश्वरथ, करों में पद्म की चर्चा की गई है। पार्श्व देवता के रूप में दण्ड-पिंगल (खड्गधारी), राज्ञी-निक्षुभा की जानकारी मिलती है।

सूर्य को भारतीय कला में ई. पू. से ही प्रतीक और मानव दोनों ही रूपों में निरूपित किया गया। चक्र, पद्म और ऋषिण्डल-जैसे प्रतीकों का अंकन आहत मुद्राओं के अतिरिक्त पांचाल एवं मित्रवंशी मुद्राओं पर भी देखा जा सकता है। दूसरी पहली शती ई. पू. से ही मुद्राओं तथा स्वतन्त्र मूर्तियों के रूप में सूर्य के निरूपण के उदाहरण मिलते हैं। सूर्य की प्रारंभिक मूर्तियाँ बोधगया (बिहार), भाजा (पूना, महाराष्ट्र), अनन्त गुम्फा (खण्डगिरि, उड़ीसा), लाला भगत (कानपुर, उ. प्र.) जैसे स्थलों से मिली हैं।

इन सामान्य विशेषताओं के साथ मिथिला में भी बहुत अधिक सूर्य प्रतिमा उपलब्ध हैं लेकिन इस क्षेत्र की सूर्य प्रतिमा के संबंध में कला इतिहासकारों के बीच कभी कोई विस्तृत चर्चा नहीं की जाती है। इसके पीछे एक कारण यह हो सकता है कि मिथिला के प्रति लोगों का रुझान कम रहा है; क्योंकि इस क्षेत्र की प्रतिमाओं के संबंध में लोगों को अधिक जानकारी नहीं है। इस विषय पर कुछ पुस्तकें प्रकाशित हुई लेकिन किसी भी पुस्तक में मूर्तिकला अथवा प्रतिमा प्राप्ति के साथ प्रतिमा विज्ञान के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी नहीं मिलती है।

विजयकांत मिश्र के लेखन के पूर्व मिथिला के इतिहास से संबंधित प्रकाशित कुछ पुस्तकें हैं- एस. एन. सिंह की पुस्तक "हिस्ट्री ऑफ तिरहुत", उपेन्द्र ठाकुर की पुस्तक "हिस्ट्री ऑफ मिथिला", योगेन्द्र मिश्र की पुस्तक "हिस्ट्री ऑफ विदेह", "हिस्ट्री ऑफ वैशाली" आदि। विजयकांत मिश्र की पुस्तक प्रकाशन के दो-ढाई दशक बाद प्रतिमाओं को ध्यान में रखकर लिखी गयी कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकों में सत्यनारायण सत्यार्थी की "दर्शनीय मिथिला", सुनील कुमार मिश्र की "मिथिला के मंदिर, गढ़ एवं पुरातत्व", सुशान्त कुमार का "दरभंगा प्रक्षेत्र की पाषाण प्रतिमाएँ"- जैसी पुस्तकें हैं, जो मूलतः मिथिला क्षेत्र की प्रतिमाओं से सम्बन्धित होकर प्रकाशित हुई हैं। किताब के शीर्षकों में नाम के लिए मिथिला शब्द का चयन कला इतिहासकारों ने किया है, लेकिन उन पुस्तकों में महज दो से तीन जिलों की चर्चा की गयी है। किसी भी दृष्टिकोण से मात्र दो से तीन जिला सम्पूर्ण मिथिला अथवा तिरहुत या तीरभुक्ति का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता है। सम्पूर्ण बिहार से सम्बन्धित प्रतिमाओं के बारे में पुष्पा सिन्हा की पुस्तक है, जिनसे बिहार की कतिपय हिन्दू प्रतिमाओं के बारे में जानकारी मिल जाती है।

सूर्य प्रतिमाओं की चर्चा के क्रम में विजयकांत मिश्र की पुस्तक में कन्दाहा, नाहर भगवतीपुर (बारहवीं शताब्दी), भीठ भगवानपुर, भद्रकाली मन्दिर में दो प्रतिमा, भगवतीपुर का उल्लेख मिलता है जबकि सूर्य प्रतिमाओं की प्राप्तिस्थानों के आधार पर सत्येन्द्र कुमार झा की यह धारणा प्रारम्भ में यह बनी कि सूर्यपूजा का प्रभाव मिथिला के सीमित दायरे तक ही प्रभावी रहा था; परन्तु शीघ्र ही उन्हें अपनी इस प्रारंभिक धारणा में परिवर्तन करना पड़ा; क्योंकि बिल्कुल हाल की सूर्य प्रतिमाओं के प्राप्तिस्थल एक व्यापक क्षेत्र विस्तार की ओर संकेत करते हैं। मधुबनी के देवपुरा गाँव (बेनीपट्टी प्रखण्ड) से सूर्य के अनुत्तर देवता दण्ड और पिङ्गल एवं उनकी पत्नियों प्रत्यूषा एवं उषा ने उनका ध्यान आकर्षित किया, परन्तु बहुत प्रयास के उपरान्त भी सूर्य की मूर्ति इस ग्राम से प्राप्त नहीं हो सकी।

दरभंगा शहर के अन्तर्गत बेंता-लहेरियासराय से पूर्व रघेपुरा से एक आकर्षक सूर्य प्रतिमा 1998 में प्रकाश आई है। साढ़े चार फीट ऊँची इस प्रतिमा की शरीर के ऊपर छोटे-छोटे पुष्प चिन्हों (बूटे) का अङ्कन किया गया है, जो सम्भवतः देवता के उत्तरीय वस्त्र को दर्शाता है। अधिकांश सूर्य मूर्तियाँ पाल-सेन काल के परवर्ती काल 12-13 वीं सदी के करीब मिलती है (सहरसा के निकट विख्यात कन्दाहा सूर्य की प्रतिमा तो इसके भी बाद की लगती है)। सत्येन्द्र कुमार झा को एक भी ऐसी सूर्य की मूर्ति नहीं दिखी जो प्रारम्भिक पालकालीन (9-10 वीं सदी) की हो, जैसे कि कुछ वैष्णव, शैव और शाक्त-मूर्तियों की स्थिति है। इस आधार पर सूर्यमूर्ति की उपलब्धता को मिथिला की मूर्तिकला के परिप्रेक्ष्य में देखने और समझने की आवश्यकता बन जाती है।

मिथिला के पूर्वी दक्षिणी हिस्से में स्थित राजशाही संग्रहालय में सुरक्षित सूर्य मूर्ति में किरीट मुकुट आदि आभूषणों से अलंकृत सूर्य के दोनों हाथों में सनाल कमल है। सात अश्वों से संचालित रथ पर सवार सूर्य के पार्श्व में दण्डी, पिंगल, सारथी अरुण, राज्ञी, निक्षुभा और भू-देवी महाश्वेता का प्रदर्शन हुआ है। उत्तरी बिहार के पश्चिमी सीमा क्षेत्र के सारण जिला के एकमा और मुंगेर की तरह नालन्दा भी सूर्य पूजा का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र रहा है। तिब्बती सूत्रों में नालन्दा में एक सूर्यकुण्ड होने का उल्लेख मिलता है। नालन्दा का सूर्यकुण्ड अब भी है तथा उस स्थान पर मेला लगता है। इस स्थान से अनेक सूर्य मूर्तियाँ मिली हैं। सहरसा जिले के बनगाँव के निकट कनदाहा से विग्रहपाल तृतीय का एक ताम्रपत्र मिला है। इसमें सूर्य मन्दिर होने का उल्लेख मिलता है।

ऐसा लगता है कि सूर्य-पूजा का प्रचलन मिथिला में अपेक्षाकृत विलम्ब से हुआ था। इसके क्या कारण रहें होंगे, यह अन्वेषण का विषय हो सकता हैं। मगध में केन्द्रित मूर्ति शिल्प परम्परा से मिथिला की मूर्तियों का संपर्क या सम्बन्ध किस तरीके से था, इसको समझने के लिये मगध एवं मिथिला में बनी सूर्य मूर्तियों की शिल्पगत बनावट, उसके अलंकरण, आयुध आदि को प्रतिमा विज्ञान के संदर्भ में देखने की आवश्यकता है।

कुछ वर्ष पूर्व तक सत्येन्द्र कुमार झा के अनुसार यह मान्यता प्रचलित थी कि सूर्य-प्रतिमाएँ मधुबनी जिले के एक खास और सीमित क्षेत्र से प्राप्त होती रही है और यह क्षेत्र है इस जिले का पूर्वी हिस्सा झंझारपुर और मधेपुर का पट्टी जो पुराने कमला बलान के नदी के बहाव के किनारे पड़ता है। इस क्षेत्र के अनुसार नाहर भगवतीपुर, भीठ भगवानपुर, राजनगर, पस्टन,

जगदीशपुर, परसा आदि आ जाता है, लेकिन अब यह मान्यता भी खत्म होने की ओर है; क्योंकि पिछले डेढ़ दशक के अपने अन्वेषण के दौरान एवं उसके बाद मधुबनी जिले के पश्चिमी क्षेत्र में सलेमपुर, बनकट्टा, दैपुरा (देवपुरा, बेनीपट्टी, मधुबनी) आदि जगहों से सूर्य की कई प्रतिमाओं के मिलने की जानकारी है।

बनकट्टा की दो सूर्यमूर्तियाँ

तीरभुक्ति से प्राप्त सूर्य प्रतिमा-स्थलों के रूप में मुख्यतया अंधराठाढ़ी (मधुबनी), दो सूर्य (एक कमला-दित्य स्थान, दूसरा सरखड़ा पोखर से प्राप्त), अरई (दरभंगा), भोज पंडोल (मधुबनी), भीठ भगवानपुर (मधुबनी), बरुआर (मधुबनी), भैरव बलिया, बनकटा दो सूर्य (बेनीपट्टी, मधुबनी), वीरपुर (बेगूसराय), वरैपुरा (बेगूसराय), भुवनेश्वर स्थान भग्न प्रतिमा (मधुबनी), बरीजान (कोचाधामन, किशनगंज), चेचर (वैशाली), डिलाही (दरभंगा), देवपुरा (मधुबनी), देकुली (दरभंगा), गंगेश्वरस्थान (जाले, दरभंगा), घनश्यामपुर (मधुबनी), गोढोल (मधुबनी), हावीडीह से तीन प्रतिमा, एक दुर्गा स्थान में, दूसरा लक्ष्मी नारायण मंदिर में और तीसरा 26 जून, 2018 को प्राप्त (दरभंगा), जगदीशपुर (मनीगाछी, दरभंगा), जगतपुरा (बरुआरी, सुपौल), कन्दाहा (सहरसा) नाहर खण्डित मूर्ति (मधुबनी), भगवतीपुर बाजार दो मूर्ति (मधुबनी), परसा (मधुबनी), पोखराम (दरभंगा), पटोरी (सहरसा), पोझियाम (वैशाली), रघेईपुरा (दरभंगा), रोहार महमूदा खण्डित प्रतिमा (दरभंगा), रखवारी जली हुई प्रतिमा (मधुबनी), रतनपुर (दरभंगा), राजनगर (मधुबनी), सवास (दरभंगा-मुजफ्फरपुर सीमा), सलेमपुर (मधुबनी), श्रीनगर (धौलाढ़, मधेपुरा), सीताकुंड (पिपरा, पूर्वी चम्पारण), दैपुरा (देवपुरा, बेनीपट्टी, मधुबनी), लालगंज (क्योटी, दरभंगा), नदियामि (दरभंगा), सिपहगिरी (मधुबनी) आदि जगह हैं। क्षेत्रों में मंदिरों में रखी हुई प्रतिमाओं से अलग

द्वादश आदित्यों के नाम-

1. धातृ, 2. मित्र, 3. अर्यमन, 4. वरुण, 5. रुद्र, 6. सूर्य, 7. भग, 8. विवस्वान्, 9. पूषन, 10. सविता, 11. त्वष्टा, 12. विष्णु।

सूर्य-मूर्ति, हाबीडीह, दरभंगा

सूर्य-मूर्ति, घनश्यामपुर, दरभंगा

सूर्य-मूर्ति, सत्तरकटैया, पतोरी, सहरसा

द्वादशादित्य, शिवनगर, मधुबनी

सूर्य-मूर्ति, भोज पंडौल, मधुबनी

राजकीय एवं व्यक्तिगत संग्रहालयों में भी बहुत अधिक मात्रा में पाषाण प्रतिमाएँ संग्रहीत एवं संरक्षित हैं।

तीरभुक्ति के क्षेत्र में पाल, प्रतिहार, राष्ट्रकूट, चन्देल, चेदि आदि विभिन्न राजवंश के शासन से संबंधित कालावधि की सही-सही जानकारी प्राप्त नहीं है, लेकिन यह जानकारी ऐतिहासिक रूप से उपलब्ध है कि 1097 ईस्वी में नान्यदेव ने सिमरौनगढ़ में स्वतन्त्र रूप से अपना शासन स्थापित किया। नान्यदेव से सम्बन्धित मूर्ति अभिलेख अंधराठाढ़ी में मिला है तो नान्यदेव के पुत्र मल्लदेव से सम्बन्धित मूर्ति अभिलेख भीठभगवानपुर में मिला है। अंधराठाढ़ी में जिस प्रकार से कई तरह की मूर्तियों की प्राप्ति हुई है, उसी तरह भीठभगवानपुर से भी हमें कई तरह की मूर्तियों के प्राप्त होने की जानकारी मिलती है। यहाँ सूर्य की प्रतिमा के साथ-साथ गणेश, विष्णु, उमा-महेश्वर आदि देवी देवताओं सम्बन्धित प्रतिमाओं की प्राप्ति हुई है। घनश्यामपुर गांव से प्राप्त गणेश एवं सूर्य की प्रतिमा कमोबेश भीठभगवानपुर की प्रतिमा जैसी ही है।

द्वादश आदित्य

सूर्य को 'द्वादश आदित्य' के रूप में पूजने की प्राचीन परम्परा रही है। मधुबनी जिला के बरुआर में द्वादश आदित्य की बहुत अच्छी प्रतिमा है। महाकाव्यों और पौराणिक कथाओं में द्वादश आदित्य के रूप में धातृ, मित्र, अर्यमन, वरुण, रुद्र, सूर्य, भग, विवस्वान्, पूषन, सविता, त्वष्टा और विष्णु के नाम मिलते हैं। आदित्यों के नाम की सूची में सभी शास्त्रों में अलग अलग मिलती है। सूर्य के बारह स्वरूपों की कल्पना उनके कार्यों के आधार पर किया गया है। विष्णुपुराण

द्वादशादित्य, बरुआर, मधुबनी

में वर्ष के बारह महीने के आधार पर द्वादश आदित्य बतलाये गये हैं। जैसे- चैत में धाता, वैशाख में अर्यमन, ज्येष्ठ में मित्र, आषाढ़ में वरूण, श्रावण में इन्द्र, अश्विन में पूषा, कार्तिक में पर्यन्य, मार्गशीर्ष में अंश, पौष में भग, माघ में त्वष्टा। सूर्य के बारह आदित्य अपने सात-सात गणों के साथ एक-एक मास सूर्य के रथ पर आरूढ़ रहते हैं। सूर्य मण्डल के ये सात-सात गण ही वर्षा, ग्रीष्म और शीत ऋतु के कारक तत्त्व हैं।

द्वादश आदित्य की जानकारी हमें महाभारत, अग्निपुराण, कूर्मपुराण, ब्रह्मपुराण, विष्णुपुराण, स्कन्दपुराण, काश्यपशिल्प आदि ग्रन्थों से मिलती है। सूर्य के साथ धाता, रुद्र, विष्णु और यहाँ तक कि इन्द्र का आदित्य रूप में उल्लेख जीवन के लिए सूर्य की अनिवार्यता की दृष्टि से उल्लेखनीय है। द्वादश आदित्य के प्रतिमालाक्षणिक विवरण से स्पष्ट होता है कि 11-12वीं शताब्दी ई. में द्वादश आदित्यों के अलग-अलग लक्षण निर्धारण में भी स्पष्टतः विभिन्न स्वरूपों में धाता, विष्णु और रूद्र के लक्षणों के माध्यम से महत्व और जगत की सृष्टि, पालन और संहार तीनों के नियामक ब्रह्मा, विष्णु और शिव के साथ उनके ऐक्य का भाव व्यक्त किया गया है।

सूर्य प्रतिमा की कम उपलब्धता और प्रतिमा विज्ञान से संबंधित अपेक्षाकृत कम अध्ययन ने बिहार के सूर्य मंदिर और सूर्य प्रतिमाओं के संबंध में उपेक्षा का भाव पैदा कर दिया है। प्रारंभिक मध्य काल में मन्दिर की तरह मूर्ति का भी निर्माण किया गया। सूर्य की प्रतिमाओं पर नृत्य, शृंगार और सौन्दर्य के प्रतीक नायक नायिकाओं और देवांगनाओं के विभिन्न भावों को समझने की आवश्यकता है ताकि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में इसकी व्याख्या हो सके।

सन्दर्भ सूची

1. सत्येन्द्र कुमार झा, मिथिला की पाल प्रतिमाएँ, मिथिला संस्कृति एवं परम्परा, पटना, 2001
2. सत्येन्द्र कुमार झा, मिथिला की मूर्तिकलाः एक सर्वेक्षण, मिथिला शोध संस्थान पत्रिका, दरभंगा, 2006,
3. एस. एन. सत्यार्थी, दर्शनीय मिथिला नौ खण्ड, द्वितीय संस्करण, दरभंगा, मई 2003
4. विजयकान्त मिश्र, मिथिला आर्ट एन्ड आर्टिटेक्चर, मिथिला प्रकाशन, इलाहाबाद 1978
5. विजयकान्त मिश्र, कल्चरल हैरिटेज ऑफ मिथिला, मिथिला प्रकाशन, इलाहाबाद 1979
6. सुनील कुमार मिश्र, मिथिला के मंदिर गढ़ एवं पुरातत्व, दामोदर प्रकाशन, मधुबनी, प्रथम संस्करण, 2010.
7. अशोक कुमार सिंह, सुपौल जिला के पुरातात्त्विक स्थल, कोशी क्षेत्र का सांस्कृतिक एवं पुरातात्विक महत्व, पटना, 2003
8. प्रफुल्ल कुमार सिंह 'मौन', कर्णाटकालीन मूर्तिकला, मिथिला एन्ड आर्कियोलाजी, पटना, 2006.
9. धर्मेन्द्र कुमर, मिथिला मिसलेनी, दरभंगा
10. शिवकुमार मिश्र, मिथिला भारती, पटना, 2018.
11. सुशान्त कुमार, दरभंगा प्रक्षेत्र की पाषाण प्रतिमाएँ, कला प्रकाशन, वाराणसी, 2016.
12. आत्म प्रकाश सिंह, उत्तर भारत के सूर्य मन्दिरों का वास्तु एवं मूर्तिपरक अध्ययन, कला प्रकाशन, वाराणसी, 2012.

***